7 अकबर : विजयें, राजपूत नीति, धार्मिक नीति
(Akbar : Conquests, Rajput Policy, Religious Policy)

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1—अकबर का परिचय दीजिए। एक महान विजेता के रूप में उसके कार्यों का मूल्यांकन कीजिए।

Who was Akbar? What were his achievements as a great conqueror?

उत्तर—

अकबर का परिचय
(Introduction of Akbar)

अकबर का जन्म 1542 ई० में **अमरकोट** नामक स्थान पर हुआ था। उसकी माता का नाम **हमीदा बानू बेगम** तथा पिता का नाम **हुमायूँ** था। अकबर के जन्म के विषय में **निजामुद्दीन अहमद** ने लिखा है—"हुमायूँ के पुत्र का जन्म 5 रज्जब, 949 (15 अक्टूबर, 1542) को हुआ। अकबर के जन्म की सूचना तार्दीबेग खाँ ने अमरकोट के निकट हुमायूँ को दी। सम्राट ने लोगों की सलाह से बालक का नाम जलालुद्दीन अकबर रखा।" जिस समय अकबर का जन्म हुआ, उस समय हुमायूँ विपत्तियों से ग्रस्त था। वह शरणार्थी के रूप में इधर-उधर सहायता के लिए भटक रहा था, अत: वह अपनी विषम परिस्थितियों के कारण अकबर के जन्म की खुशी में पुरस्कार आदि भी न बाँट पाया। फिर भी उसने अपने साथियों में कस्तूरी के टुकड़े करके वितरित किए और कहा, "अपने पुत्र-जन्म के इस अवसर पर केवल यही भेंट मैं इस समय आप लोगों को दे सकता हूँ। मैं आशा और कामना करता हूँ कि जिस तरह इस खेमे में इस कस्तूरी की सुगंध फैल रही है, उसी तरह मेरे पुत्र का यश-सौरभ किसी दिन संसार भर में फैलेगा।"

अकबर का उत्कर्ष—हुमायूँ ने पंजाब पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् अकबर को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया तथा **बैरम खाँ** की अध्यक्षता में उसे पंजाब और गजनी का सूबेदार बना दिया गया। 1556 ई० में हुमायूँ की मृत्यु के बाद 14 वर्ष की अल्पआयु में अकबर सिंहासन पर बैठा। बैरम खाँ ने पंजाब के गुरदासपुर जिले के निकट **कलानौर** नामक स्थान पर अकबर का राज्याभिषेक करवाकर उसे भारत का बादशाह घोषित कर दिया। **स्मिथ** ने लिखा है—**"इस संस्कार से केवल हुमायूँ के पुत्र को हिन्दुस्तान के राजसिंहासन का उत्तराधिकार प्राप्त करने की घोषणा-मात्र हुई।"**

अकबर की समस्याएँ
(Problems of Akbar)

जिस समय अकबर सिंहासन पर बैठा उसके सम्मुख अनेक समस्याएँ थीं। इनका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है—

Scanned with CamScanner

राजनीतिक समस्याएँ

अकबर की तत्कालीन राजनीतिक समस्याओं का विवरण निम्न प्रकार है—

(1) अनुभवहीनता—जिस समय अकबर गद्दी पर बैठा, उस समय उसकी आयु केवल 14 वर्ष थी, राजनीतिक दाँव-पेचों एवं कार्य-प्रणाली से वह पूर्णतया अनभिज्ञ था और राजनीतिक कार्यों में अपने गुरु एवं संरक्षक बैरम खाँ पर आश्रित था।

(2) उत्तर भारत में विरोध—इस समय भारत के उत्तरी भाग पर अनेक स्वतन्त्र राज्यों का आधिपत्य था; जैसे—पंजाब में **सिकन्दर सूर**, दिल्ली व आगरा पर **हेमू**, वर्तमान उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग पर **मुहम्मद आदिलशाह सूर**; अत: जिस समय अकबर गद्दी पर बैठा उस समय पंजाब के कुछ इलाकों को छोड़कर उसके अधीन कोई भी शक्तिशाली प्रान्त नहीं था। अपने साम्राज्य को विस्तृत करने के लिए उसका सूरवंशीय सरदारों से युद्ध करना अनिवार्य था। इसके साथ-साथ राजपूताने में राजपूत शासक भी अपनी शक्ति का विस्तार कर रहे थे और मालवा तथा गुजरात के शासक स्वतन्त्र हो गए थे।

(3) दक्षिण-भारत में विरोध—दक्षिण में गोलकुण्डा, अहमदनगर, बीदर, बरार तथा बीजापुर आदि रियासतें स्वतन्त्र होकर अपना-अपना प्रभुत्व बढ़ा रही थीं। ये सभी रियासतें मुगलों की विरोधी थीं।

(4) उत्तर-पश्चिमी प्रदेशों की समस्याएँ—इस समय सिन्ध व मुल्तान स्वतन्त्र हो गए थे तथा काबुल पर **मिर्जा मोहम्मद हाकिम** का अधिकार हो गया था। हुमायूँ ने अपने कार्यकाल में बदख्शाँ पर अधिकार कर लिया था तथा वहाँ **मिर्जा सुलेमान** को काबुल का गवर्नर नियुक्त कर दिया था। किन्तु हुमायूँ की मृत्यु के बाद उसने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया था और काबुल पुन: फारस की अधीनता में चला गया था।

(5) विदेशियों की समस्याएँ—भारत के पश्चिमी समुद्री तट पर पुर्तगालियों का अधिकार हो गया था तथा उनका इरादा गोवा तथा ड्यू पर अधिकार करके अरब तथा फारस की खाड़ी पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना था। इस प्रकार विदेशियों की समस्या भी अकबर के सामने एक जटिल समस्या थी।

(6) आर्थिक समस्याएँ—अभी तक भारतीय जनता मुगलों को लुटेरा-मात्र समझती थी। अनेक युद्धों एवं सम्राटों की अपव्ययता के कारण देश की आर्थिक व्यवस्था बिगड़ चुकी थी और हिन्दुओं को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। उपजाऊ भूमि बरबाद हो गई थी और चारों ओर विनाशकारी अकाल फैला हुआ था। कई बार अकाल पड़ने के कारण आर्थिक संकट ने लोगों को भूखा मरने के लिए विवश कर दिया था। कई शहरों में फैले प्लेग ने स्थिति को और भी गम्भीर कर दिया।

इन समस्याओं के होते हुए भी अकबर ने धैर्य से कार्य लिया। इन समस्याओं को हल करने के लिए उसके संरक्षक बैरम खाँ ने सदैव अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दिया।

अकबर की प्रारम्भिक उपलब्धियाँ
(Early Achievements of Akbar)

(1) पानीपत का द्वितीय युद्ध (1556 ई०)—दिल्ली और आगरा पर अधिकार करने के लिए अकबर ने बैरम खाँ की सहायता से दिल्ली की ओर कूच कर दिया। 1556 ई० में पानीपत के मैदान में अकबर की सेना का सामना **मुहम्मद आदिलशाह** के वीर हिन्दू सेनापति **हेमू** से हुआ। इस संग्राम में पहले मुगलों की सेना के पैर उखड़ गए थे, किन्तु बाद में एक तीर

Scanned with CamScanner

हेमू की आँख मे लग जाने से वह घायल हो गया। उसकी सेना उसे मरा हुआ जानकर भयभीत हो गई और भाग खड़ी हुई। इस घटना से मुगलों की पराजय विजय में बदल गई। हेमू को अकबर के सम्मुख लाया गया जहाँ उसका सिर बैरम खाँ ने काट दिया। इस प्रकार दिल्ली और आगरा पर अकबर का अधिकार हो गया। **डॉ० आर० पी० त्रिपाठी** ने लिखा है—"उसकी (हेमू की) पराजय एक दुर्घटना थी और अकबर की विजय दैवी संयोग से हुई थी।"

(2) अफगानों पर विजय—1557 ई० में अकबर ने **सिकन्दर सूर** को परास्त कर दिया। दूसरी ओर **मुहम्मदशाह आदिल** भी बंगाल के विरुद्ध युद्ध करते हुए मारा गया। इस प्रकार अकबर को अपने अफगान शत्रुओं से मुक्ति मिल गई।

(3) बैरम खाँ का पतन—बैरम खाँ बदख्शाँ का रहने वाला था। बैरम खाँ सदैव ही हुमायूँ व अकबर के प्रति स्वामिभक्त रहा। 1540 ई० में हुमायूँ एवं शेरशाह के मध्य हुए कन्नौज के युद्ध मे बैरम खाँ को बन्दी बना लिया गया था, किन्तु वह वहाँ से भाग निकला था। कठिनाइयों में वह सदैव हुमायूँ का साथी रहा तथा उसी के प्रयासों से ईरान के शाह ने हुमायूँ को सहायता प्रदान की, जिससे पुन: भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना हो सकी। बैरम खाँ ने ही अकबर को दिल्ली व आगरा की विजय में सहयोग दिया तथा पंजाब, अजमेर, ग्वालियर, जौनपुर आदि प्रदेशों को मुगल साम्राज्य के अधीन किया था। यद्यपि बैरम खाँ महान स्वामिभक्त था, किन्तु कुछ ऐसे कारण थे जिनके फलस्वरूप अकबर को इस महान स्वामिभक्त, अपने गुरु और संरक्षक को राज्याधिकारों से वंचित करने का निर्णय लेना पड़ा। ये कारण निम्नलिखित थे—

(1) बैरम खाँ के पतन का मुख्य कारण अन्त:पुर (शाही रनिवास या हरम) का षड्यन्त्र था, क्योंकि **हमीदा बानू बेगम,** अकबर की धाय माता **माहमअनगा** व माहमअनगा के पुत्र **आधम खाँ,** माहमअनगा की लड़की व दामाद ने बैरम खाँ के विरुद्ध अकबर के कान भरे थे, क्योंकि ये सभी बैरम खाँ से घृणा करते थे।

(2) बैरम खाँ शिया मत का अनुयायी था, किन्तु अकबर एवं उसके दरबार के अन्य सरदार कट्टर सुन्नी मुसलमान थे। ये सरदार बैरम खाँ के बढ़ते हुए प्रभुत्व से ईर्ष्या करने लगे थे।

(3) बैरम खाँ अकबर पर भी अपना अनुचित प्रभाव जमाना चाहता था; अत: वह सम्राट के नौकरों को भी कठोर दण्ड देने से नहीं हिचकता था, जिसके कारण अकबर भी उससे तंग आ गया था। **अबुल फजल** ने लिखा था—"उसका व्यवहार बर्दाश्त से बाहर हो गया था और उसका दिमाग उसके चाटुकारों ने खराब कर दिया था।"

(4) बैरम खाँ राज्य के शिया सम्प्रदाय के मानने वाले व्यक्तियों एवं अपने चाटुकारों को उच्च पद प्रदान करता था। उसके द्वारा **शेख गदायी** नाम के एक शिया को सदरे-सदर के महत्त्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया जाना, दरबार के सुन्नी सरदारों को अपनी धार्मिक भावनाओं पर प्रहार लगा।

(5) हुमायूँ की मृत्यु के बाद **तार्दीबेग** ने दिल्ली पर मुगलों के आधिपत्य को बनाए रखा, किन्तु हेमू की शक्ति से भयभीत होकर उसे दिल्ली छोड़कर भागना पड़ा। दिल्ली छोड़ने के अपराध में बैरम खाँ ने उसका वध करवा दिया था। उसके इस कार्य से बैरम खाँ का विरोध बढ़ गया था।

(6) वह यद्यपि साम्राज्य के प्रति तो निष्ठावान था, परन्तु उसका स्वभाव अत्यधिक क्रोधी और ईर्ष्यालु था। प्राय: क्रोध में वह ऐसे निर्णय ले लिया करता था जो अकबर को भी मान्य नहीं होते थे।

Scanned with CamScanner

इन सभी कारणों के साथ-साथ अकबर अब तक बालिग हो चुका था और वह राज्य की बागडोर अपने हाथ में लेना चाहता था। अत: उसने बैरम खाँ को सन्देश भेजा कि मैं अब साम्राज्य की बागडोर अपने हाथों में लेना चाहता हूँ और बैरम खाँ अब मक्का यात्रा के लिए प्रस्थान कर दें। उसके निर्वाह हेतु अकबर ने एक जागीर का भी प्रबन्ध कर दिया था। इस आदेश का बैरम खाँ ने पालन किया, किन्तु बैरम खाँ के विरोधी सरदारों ने **पीर मुहम्मद** को बैरम खाँ के पीछे इस उद्देश्य से भेज दिया कि बैरम खाँ रास्ते में न रुके और उसे शीघ्र ही भारत से निकाल दिया जाए। इससे असन्तुष्ट होकर उसने तिलवाड़ा नामक स्थान पर विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह को दबाने अकबर स्वयं गया, किन्तु बैरम खाँ ने आत्मसमर्पण कर दिया। बैरम खाँ को सम्राट ने क्षमा कर दिया तथा अकबर ने उसके समक्ष चन्देरी का सूबेदार बनने या अपना सलाहकार बनने या मक्का जाने के तीन प्रस्ताव रखे। बैरम खाँ ने मक्का जाना स्वीकार किया, किन्तु मक्का जाने से पूर्व ही उसके एक विरोधी ने मार्ग में 'पाटन' नामक स्थान पर उसका वध कर दिया। **डॉ० स्मिथ** ने लिखा है—"बैरम खाँ के पतन और मृत्यु तक की स्थिति की कहानी एक कटुता की छाप छोड़ जाती है यह स्पष्ट रूप से ज्ञात है कि बादशाह को घेरे हुए और छाए हुए षड्यन्त्रकारियों ने उसके संरक्षक को किसी भी मूल्य पर हटाने का पूर्ण निश्चय कर रखा था।" इस प्रकार बैरम खाँ का करुणाजनक अन्त हो गया। अकबर ने बैरम खाँ की विधवा पत्नी **सलीमा बेगम** से विवाह कर लिया और उसके पुत्र **अब्दुर्रहीम** का अपने पुत्र की भाँति पालन-पोषण किया।

(4) अन्त:पुर की समस्या का अन्त—बैरम खाँ की मृत्यु के बाद अकबर पर उसकी धाय माता **माहमअनगा** का प्रभाव रहा। **डॉ० स्मिथ** ने लिखा है—**"अकबर बैरम खाँ के शासन से, केवल इस बुद्धिहीन स्त्री के भयंकर प्रभाव में रहने के लिए मुक्त हुआ।"** माहमअनगा अपने पुत्र **आधम खाँ** को शक्तिशाली बनाना चाहती थी। इधर अकबर ने आधम खाँ को मालवा विजय के लिए भेजा, किन्तु मालवा-विजय में प्राप्त लूट का माल उसने शाही खजाने में जमा नहीं कराया, जिससे अकबर बहुत क्रोधित हुआ। किन्तु इस बार माहमअनगा ने अपने पुत्र को अकबर के प्रकोप से बचा लिया। इसके बाद आधम खाँ ने अकबर के एक विश्वासी सेवक **शमसुद्दीन अतगा खाँ** का वध करा दिया, जिससे क्रोधित होकर अकबर ने आधम खाँ को किले से नीचे फेंकने का हुक्म दिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। कुछ दिनों बाद अपने पुत्र के शोक में माहमअनगा की भी मृत्यु हो गई और इस प्रकार अकबर को अन्त:पुर की समस्या से छुटकारा मिल गया। अकबर ने 1560 ई० में अपने मामा **ख्वाजा मुअज्जम** को अपनी पत्नी का कत्ल करने के अपराध में नदी में डुबाने का आदेश दिया, लेकिन जब वह नदी में डूबकर नहीं मरा तो उसे ग्वालियर में बन्दी बना लिया गया जहाँ वह मर गया।

इस प्रकार, अकबर ने अपने निकट सम्बन्धियों को भी कठोर दण्ड देकर निष्पक्ष न्याय-व्यवस्था को बनाए रखा।

अकबर की विजयें
(Conquests of Akbar)

अकबर ने निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण विजयें प्राप्त कीं—

(1) मालवा विजय—मालवा का शासक **बाजबहादुर** अपनी सुन्दर रानी **रूपमती** के साथ भोग-विलासों में लिप्त रहता था। अकबर की आज्ञा से **आधम खाँ** ने मालवा पर आक्रमण कर बाजबहादुर की रानियों और सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया। अकबर ने आधम खाँ को मालवा का सूबेदार नियुक्त कर दिया। उसके बाद **पीर मुहम्मद** को मालवा का सूबेदार बनाया

Scanned with CamScanner

गया। उसके समय में बाजबहादुर का मालवा पर पुन: अधिकार हो गया। मालवा पर उजबेग सरदार **अब्दुल्ला खाँ** ने बाजबहादुर का शासन समाप्त कर दिया। बाजबहादुर इधर-उधर भटकने के बाद अकबर का मनसबदार बन गया। कुछ समय बाद उजबेग सरदार अब्दुल्ला खाँ के विद्रोह करने पर अकबर ने इस विद्रोह को दबा दिया एवं मालवा पर अपना एकाधिपत्य स्थापित कर लिया।

(2) गोंडवाना विजय—इस समय गोंडवाना पर रानी **दुर्गावती** का राज्य था। वह अपने अल्पवयस्क पुत्र **वीर नारायण** की संरक्षिका बनकर राज्य कर रही थी। 1564 ई० में कड़ा के शासक **आसफ खाँ** ने दुर्गावती पर चौरागढ़ के निकट अकारण ही आक्रमण कर दिया। युद्ध में दुर्गावती बड़े साहस के साथ लड़ी, किन्तु वह वीरगति को प्राप्त हो गई। इस युद्ध में उसके राज्य को बुरी तरह लूटा गया तथा बहुमूल्य सामान मुगल सेना के हाथ लगा। इस प्रकर गोंडवाना पर मुगलों का अधिकार हो गया।

(3) राजपूतों पर विजय : (अ) चित्तौड़ विजय—इस समय आमेर पर राजा **बिहारीमल** (भारमल) का आधिपत्य था। बिहारीमल अपने शत्रुओं के आतंक से परेशान था। 1562 ई० में जब अकबर **मुईनुद्दीन चिश्ती** की दरगाह के दर्शन हेतु अजमेर आया, तब बिहारीमल ने उससे भेंट की तथा अपनी पुत्री से अकबर का विवाह कर दिया। इसके साथ-साथ उसने अपने पुत्र **भगवानदास** तथा पौत्र **मानसिंह** को सम्राट की सेवा मे छोड़ दिया। अन्य राजपूत राजाओं ने बिहारीमल के इस कार्य का विरोध किया, जिनमे चित्तौड़ का राजा **उदयसिंह** प्रमुख था। इस विरोध के कारण अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया। **डॉ० एस० आर० शर्मा** ने लिखा है—"अकबर बाबर से अधिक महत्त्वाकांक्षी था और उसके हित भारत में निहित थे। अत: देश के प्रथम राजपूत राजा के साथ टकराव होना निश्चित था।" इस समय राणा उदयसिंह मेवाड़ का राजा था। उदयसिंह एक कायर एवं अयोग्य शासक था। अत: अकबर से मुठभेड़ करने का साहस उसमें नहीं था। **टाड महोदय** ने लिखा है—"उसमें (उदयसिंह) एक राजा के उपयुक्त गुण नहीं थे और वह अपनी जाति के वंशानुगत गुणों—वीरता और युद्ध-कौशल से हीन तथा सबसे अधिक बलहीन व्यक्ति था। मेवाड़ के लिए बड़ा ही शुभ होता यदि वह कटार का शिकार हो जाता और मेवाड़ की राजवंशावली उदयसिंह के नाम से शून्य होती।" अत: वह सरदार **जयमल** पर साम्राज्य की रक्षा का भार सौंपकर उदयगिरि की पर्वत शृंखलाओं की ओर भाग गया। चित्तौड़ का घेरा बहुत समय तक चलता रहा, राजपूतों ने डटकर मुगलों का सामना किया, किन्तु राजपूतों की हार हुई। 1568 ई० में जब जयमल किले की दीवार की मरम्मत करा रहा था, उस समय वह अकबर की गोली का निशाना बन गया। इस प्रकार चित्तौड़ पर मुगलों का आधिपत्य हो गया। अकबर ने यहाँ कत्लेआम करवाया जो अकबर के चरित्र पर एक कलंकनीय धब्बा माना जाता है।

(ब) रणथम्भौर तथा कालिंजर विजय—इस समय रणथम्भौर पर **सुरजनसिंह हांडा** तथा कालिंजर पर **रामचन्द्र** का आधिपत्य था। 1569 ई० में अकबर ने इन दोनों किलों पर आक्रमण कर दिया। इन दोनों राजाओं को यह अहसास था कि जब चित्तौड़ जैसा सुदृढ़ दुर्ग मुगलों के समक्ष नहीं टिक सका तो उनकी क्या बिसात है। अकबर की विशाल सेना के सामने ये दोनों ही शासक टिक न सके और इन्होंने अकबर के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। इस प्रकार रणथम्भौर व कालिंजर भी मुगल शासन में विलीन कर लिए गए। अकबर की इस विजय से भयभीत होकर बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर आदि के शासकों ने भी आत्मसमर्पण कर अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली।

Scanned with CamScanner

(स) हल्दीघाटी का युद्ध—मेवाड़ के राणा उदयसिंह की मृत्यु 1572 ई० में हो गई थी। उसके बाद उसका लड़का **महाराणा प्रतापसिंह** शासक बना। यद्यपि उसका राज्याभिषेक बड़ी निराशाजनक परिस्थितियों में किया गया था, तथापि उसने चित्तौड़गढ़ पर पुन: विजय करने और मुगलों का दृढ़ता से विरोध करने का दृढ़ संकल्प किया। राणा प्रतापसिंह वीर शासक था। उसके विषय में **डॉ० स्मिथ** ने लिखा है—"महाराणा प्रताप की देशभक्ति ही उसका अपराध था। अकबर ने अपनी कुशल नीति से अधिकांश राजपूत राजाओं को अपने पक्ष में कर लिया था, इसलिए वह राणा की स्वतन्त्रता की भावना को किस प्रकार सहन कर सकता था। उसने सोचा कि यदि राणा स्वयं नहीं झुका तो उसे झुकाना पड़ेगा।" मुगल-सेनाओं से उसका घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध का इतिहासकारों ने एक अन्य कारण यह भी बताया कि जब **राजा मानसिंह** गुजरात-विजय से लौट रहा था, तो उसने राणा का आतिथ्य स्वीकार किया। राणा ने उसका स्वागत तो किया किन्तु भोजन के समय स्वयं उसका साथ नहीं दिया। उसको मानसिंह ने अपना अपमान समझा। वह आगरा आ गया और अकबर को सारा वृत्तान्त सुनाया। इस पर अकबर ने एक विशाल सेना मानसिंह के नेतृत्व में राणा प्रताप के विरुद्ध भेज दी। जून 1576 ई० में हल्दीघाटी के मैदान में घोर संग्राम हुआ, किन्तु विजय मुगलों की हुई। लेकिन यह युद्ध मुगलों को सदैव याद रहा। **आर० सी० दत्त** ने लिखा है—"बहुत वर्ष बीत जाने पर भी सफेद बालों वाले बूढ़े मुगल योद्धा दिल्ली, दक्षिण भारत व बंगाल में युवक सिपाहियों को रात भर हल्दीघाटी के युद्ध की कहानियाँ और प्रताप के आश्चर्यजनक वीरता के कार्यों की गाथा सुनाया करते थे।" राणा प्रताप अरावली पर्वतश्रेणियों की ओर निकल गए, किन्तु जीवनपर्यन्त उन्होंने चित्तौड़-विजय के प्रयास जारी रखे। धीरे-धीरे उन्होंने चित्तौड़ व अजमेर को छोड़कर समस्त मेवाड़ को स्वतन्त्र करा लिया था। यद्यपि राणा प्रताप ने जीवनभर अनेक कठिनाइयों का सामना किया, किन्तु वह अकबर के सामने नतमस्तक नहीं हुए। 1597 ई० में उसकी मृत्यु हो गई। मरते समय राणा ने अपने पुत्र अमरसिंह से कहा था—"मुगलों के आगे मस्तक मत झुकाना।"

(4) गुजरात की विजय—गुजरात एक प्रतिष्ठित व्यापार-केन्द्र था तथा अत्यधिक सम्पन्न और समृद्धिशाली था। इसके अतिरिक्त, गुजरात मक्का के रास्ते में भी पड़ता था और अकबर हज-यात्रियों को सुरक्षित मार्ग प्रदान करने के लिए इसे अपने राज्य के अन्तर्गत करना चाहता था। इस समय गुजरात पर **मुजफ्फरशाह तृतीय** का शासन था। वह अयोग्य शासक था। वह अपने सरदारों के हाथों की कठपुतली बना हुआ था। 1572 ई० में एक सेना सहित अकबर अहमदाबाद पहुँचा, किन्तु मुजफ्फरशाह ने आत्मसमर्पण कर दिया। अकबर ने शासन का उचित प्रबन्ध किया तथा स्वयं फतेहपुर सीकरी लौट आया, किन्तु वापस आकर उसको पुन: गुजरात में विद्रोह की सूचना मिली। अकबर पुन: गुजरात लौट आया। 1573 ई० में उसने गुजरात पर निर्णायक विजय प्राप्त की तथा गुजरात को मुगल साम्राज्य में विलीन कर लिया। अकबर ने काम्बे पर भी अधिकार कर लिया था। इस विजय के अनेक लाभ मुगलों को मिले, क्योंकि मुगलों को स्वतन्त्र समुद्री मार्ग प्राप्त हो गया था तथा मुगल पुर्तगालियों के सम्पर्क में आ गए थे। इस विजय पर **कैनेडी** ने लिखा है—"गुजरात दक्षिण के अभियानों के लिए, छलांग मारने के लिए एक केन्द्र बन गया।"

(5) काबुल विजय—अकबर की धार्मिक और सहनशीलता की नीति के विरोधी बहुत-से प्रभावशाली मुसलमान अकबर को हटाकर उसके सौतेले भाई काबुल के **मिर्जा हकीम** को सम्राट बनाने का षड्यन्त्र रचने लगे। अकबर की समझ में आ गया कि इस विद्रोह का मूल स्रोत काबुल में है, इसलिए उसने काबुल पर आक्रमण करने की तैयारियाँ कर डालीं। पहले तो

Scanned with CamScanner

मिर्जा हकीम वहाँ से भाग गया, परन्तु फिर उसने अकबर से क्षमायाचना कर ली। उसे क्षमा प्रदान कर दी गई। अकबर ने मिर्जा की बहन **बख्तुन्निसा बेगम** को काबुल का गवर्नर नियुक्त कर दिया, परन्तु मिर्जा ने शासन-प्रबन्ध स्वयं सँभाल लिया। 1585 ई० में मिर्जा की मृत्यु के बाद काबुल को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया तथा राजा मानसिंह को वहाँ का सूबेदार नियुक्त कर दिया गया।

(6) कश्मीर विजय—युसुफ खाँ कश्मीर का शासक था। वह हिन्दुओं पर अत्याचार करता था। इस कारण **राजा भगवानदास** और **कासिम खाँ** ने 5,000 सैनिकों के साथ कश्मीर-विजय का अभियान किया, किन्तु कश्मीर-नरेश ने उसके सामने आत्म-समर्पण कर दिया। बाद में युसुफ खाँ के पुत्र **याकूब खाँ** ने भी संघर्ष किया। अन्त में याकूब खाँ भी भाग गया और कश्मीर को काबुल प्रान्त का एक अंग घोषित कर दिया गया।

(7) सिन्ध विजय—अकबर की दृष्टि में सिन्ध प्रदेश की विजय का भी महत्त्व था, क्योंकि इस विजय के बाद ही वह कन्धार पर आसानी से विजय प्राप्त कर सकता था। 1590 ई० में **मिर्जा अब्दुर्रहीम** को मुल्तान का सूबेदार नियुक्त किया गया तथा उसे ही सिन्ध-विजय का कार्य सौंपा गया। इस समय **मिर्जा जानीबेग** सिन्ध का शासक था। उसने युद्ध के पश्चात् आत्म-समर्पण कर दिया और मुगल साम्राज्य की नौकरी में आ गया, जहाँ उसे तीन हजार का मनसबदार बना दिया गया।

(8) कन्धार विजय—हुमायूँ की मृत्यु के बाद फारस के शाह ने कन्धार पर अपना अधिकार जमा लिया था। 1595 ई० में अकबर ने कन्धार को, किलेदार **मुजफ्फर हुसैन मिर्जा** के आत्म-समर्पण करने पर, मुगल साम्राज्य का अंग बना लिया। इस विजय के सम्बन्ध में **अबुल फजल** ने लिखा है—"वे बहुत बड़ी संख्या में मारे गए और बहुत-से गुलाम बनाकर तूरान व फारस के बाजारों में बेचे गए। स्वात, बाजौर, बुनेर इत्यादि के देश, जो जलवायु, फल व भोजन के सस्तेपन में अद्वितीय थे, उपद्रवियों से शून्य कर दिए गए।"

(9) अहमदनगर विजय—उत्तरी भारत पर विजय प्राप्त करने के उपरान्त अकबर ने दक्षिण भारत की विजय का अभियान शुरू किया। इस कार्य के लिए उसने सबसे पहले अपने शिष्टमण्डलों को दक्षिण की ओर इस उद्देश्य से भेजा कि वहाँ के शासक उसे राजस्व प्रदान करें और उसकी अधीनता स्वीकार कर लें, किन्तु इस योजना में अकबर असफल रहा, क्योंकि खानदेश के राजा **अलीखाँ** के अतिरिक्त बाकी तीनों राज्यों ने नम्रतापूर्वक अकबर के प्रस्ताव को टाल दिया। अकबर ने सर्वप्रथम अहमदनगर पर आक्रमण किया। इस समय **चाँदबीबी** अपने भतीजे **मुजफ्फर** की संरक्षिका के रूप में अहमदनगर पर शासन कर रही थी। मुगलों की ओर से इस अभियान का नेतृत्व **अब्दुर्रहीम** व **मुराद** कर रहे थे। 1595 ई० में दोनों पक्षों की सेनाओं में घनघोर युद्ध हुआ। किन्तु अब्दुर्रहीम व मुराद में अनबन हो जाने से यह अभियान सफल न हो सका। केवल मुगलों को सन्धि द्वारा **बरार** ही प्राप्त हो सका। कुछ समय बाद अहमदनगर में आन्तरिक उपद्रव हो गए तथा चाँदबीबी की उसके सरदारों द्वारा हत्या कर दी गई या उसने आत्महत्या कर ली। अकबर ने स्वयं सेना लेकर 1600 ई० में बुरहानपुर पर अधिकार कर लिया और अन्त में अहमदनगर पर भी मुगलों का आधिपत्य स्थापित हो गया।

(10) बंगाल विजय—अकबर के गद्दी पर बैठने के समय बंगाल का शासक **सुलेमान किरानी** था। अकबर व उसके सम्बन्ध मधुर बने रहे। किन्तु 1572 ई० में सुलेमान किरानी की मृत्यु के बाद उसका पुत्र **दाऊद** सिंहासन पर बैठा, वह दु:साहसी एवं जिद्दी था। दाऊद ने अपनी स्वाधीनता पुन: घोषित कर दी और जमानिया पर (उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले में)

Scanned with CamScanner

आक्रमण कर दिया। जमानिया उस समय मुगल साम्राज्य का पूरबी रक्षक स्थल था। उसके इस कार्य से अकबर रुष्ट हो गया और उसने 1574 ई० में इस उद्दण्ड युवक पर आक्रमण कर दिया। दाऊद बंगाल से उड़ीसा की ओर भाग गया। अन्त में अकबर ने **राजा टोडरमल** को बंगाल का सूबेदार बनाकर कार्यवाही करने की आज्ञा दी। उसने 1580 में बंगाल पर विजय प्राप्त की तथा उसे मुगल साम्राज्य का अंग बना लिया।

(11) असीरगढ़ विजय—इस समय असीरगढ़ का दुर्ग सबसे अधिक मजबूत और अभेद्य माना जाता था। अत: अकबर ने इस किले को जीतने का अभियान शुरू कर दिया। 6 मास तक इस किले की नाकेबन्दी होती रही, किन्तु **सलीम** का विद्रोह हो जाने के कारण इस पर अधिकार न किया जा सका। अन्तत: अकबर ने कूटनीति से काम लिया तथा यहाँ के शासक **मीरन बहादुर** को सन्धि के बहाने बुलाकर रोक लिया तथा घेरा और कड़ा कर दिया। अन्त में जनवरी 1601 ई० में किले पर अधिकार कर लिया गया। इस प्रकार खानदेश भी मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। मीरन बहादुर को ग्वालियर के किले में बन्दी बनाकर भेज दिया गया और फिर चार हजार अशर्फियाँ वार्षिक निर्वाह के लिए निश्चित कर दी गईं। **विन्सेंट स्मिथ** ने अकबर पर मीरन बहादुर के साथ दुर्व्यवहार करने का आरोप लगाया है, परन्तु **वूल्जले हेग** का कहना है कि मीरन बहादुर भी उतना ही दोषी था जितना अकबर, क्योंकि वे दोनों एक-दूसरे को चकमा देना चाह रहे थे।

(12) पुर्तगालियों से सम्बन्ध—पुर्तगालियों की अरब सागर में हलचल, भारत के सामुद्रिक व्यापार में उनका हस्तक्षेप, मुसलमानों के प्रति उनकी धार्मिक अत्याचार की नीति आदि के कारण अकबर चिन्तित था। अत: उसने पुर्तगालियों का दमन करने का प्रयत्न किया, किन्तु वह असफल रहा। 1508 ई० में बीजापुर के नवाब के हाथों से गोवा निकल गया था तथा पुर्तगालियों ने वहाँ समस्त मुसलमानों को मार दिया था। 1582 ई० में पुर्तगालियों ने सूरत को भी लूटने की कोशिश की, किन्तु मुगल सेना के वहाँ पहुँचने से वे ऐसा न कर सके। अकबर जानता था कि एक विशाल सेना की सहायता से ही वह पुर्तगालियों पर विजय प्राप्त कर सकता है, किन्तु समयाभाव के कारण वह ऐसा न कर सका।

विजित प्रदेशों की सुव्यवस्था

इस प्रकार हम देखते हैं कि अकबर का साम्राज्य-विस्तार उत्तर-पश्चिम में कन्धार से लेकर पूर्व में बंगाल तक, उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण में अहमदनगर तक फैला हुआ था। उसने अपने समस्त विजित प्रदेशों को एक केन्द्रीय शासन व्यवस्था के अन्तर्गत संगठित कर रखा था। उसने अपने साम्राज्य के सभी प्रांतों में एकसमान शासन-प्रणाली स्थापित की और देश के एकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया।

प्रश्न 2—अकबर की राजपूतों के प्रति नीति की विवेचना कीजिए।

Describe Akbar's policy towards Rajupts.

उत्तर—

अकबर की राजपूत नीति
(Rajput Policy of Akbar)

सम्पूर्ण मध्यकाल में दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों ने हिन्दुओं को प्रशासन से अलग रखने की नीति का पालन किया। यद्यपि हिन्दू हिसाब-किताब तथा आर्थिक मामलों में अत्यधिक निपुण थे, परन्तु फिर भी धार्मिक भेदभाव की नीति के कारण उन्हें इन विभागों से अलग ही रखा गया तथा उच्च पद तो कभी प्रदान ही नहीं किए गए। यद्यपि मुसलमान अधिकारी समय-समय

Scanned with CamScanner

पर सुल्तानों के विरुद्ध विद्रोह और षड्यन्त्र रचते रहे, परन्तु फिर भी प्रशासनिक पद उन्हीं को प्रदान किए जाते रहे।

अकबर की राजपूत नीति का आधार—अकबर जिस समय अपने पिता हुमायूँ की अचानक मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठा, उस समय उसकी आयु केवल 13-14 वर्ष थी। उसके चारों ओर उसके शत्रु थे, जो दिल्ली की गद्दी पर आँख लगाए हुए थे। ऐसे में उसको अपनी जाति के लोगों के समर्थन की अत्यधिक आवश्यकता थी। परन्तु उसने देखा कि उसके मुसलमान कर्मचारी और अधिकारी मुख्यत: अपनी स्वार्थ-सिद्धि की भावना से प्रेरित थे और उन पर किसी भी प्रकार भरोसा नहीं किया जा सकता था। उसके घर और दरबार में इतने अधिक विद्रोही थे कि उसके मस्तिष्क में यह बात स्पष्ट हो गई कि यदि उसे भारतवर्ष में अपनी सत्ता को बनाकर रखना है और अपने राजवंश को सुरक्षित रखना है, तो भारत के ही प्रमुख राजनीतिक तत्त्वों का सहयोग, समर्थन और स्वामिभक्ति प्राप्त करना आवश्यक है। इसीलिए उसका ध्यान भारत की प्रमुख जाति राजपूतों की ओर गया। इसके दो कारण थे, पहला तो यह कि राजपूत वीर और साहसी होने के साथ-साथ अपने वचन के पक्के थे तथा उनकी वफादारी पर विश्वास किया जा सकता था। दूसरी बात यह है कि विद्रोही अफगानों और मुगलों के विरुद्ध उन्हें सफलतापूर्वक भिड़ाया जा सकता था। इसीलिए उसने उनके प्रति अपने पिता तथा पितामह की नीति को परिवर्तित कर दिया तथा उन्हें राज्य का सुदृढ़ आधार-स्तम्भ बनाने का प्रयास किया। **डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव** ने लिखा है—"राजपूतों के प्रति अकबर का व्यवहार किसी अविचारशील भावना का परिणाम नहीं था और न राजपूतों की धीरता, वीरता, स्वदेश-भक्ति के प्रति सम्मान का ही परिणाम था। उसका यह व्यवहार एक सुनिर्धारित नीति का परिणाम था और यह नीति स्वलाभ, योग्यता की स्वीकृति तथा न्याय-नीति के सिद्धान्तों पर आधारित थी।"

राजपूतों से विवाह-सम्बन्ध—अकबर ने राजपूतों के साथ विवाह-सम्बन्धों के माध्यम से मैत्री करने की नीति अपनाई। 1562 ई० में जब अकबर **शेख मुईनुद्दीन चिश्ती** की दरगाह की यात्रा करने अजमेर जा रहा था तो मार्ग में आमेर (जयपुर) के राजा **भारमल** ने अकबर की अधीनता स्वीकार की और अपनी पुत्री का विवाह उससे करना स्वीकार किया। राजपूताना के किसी राज्य के साथ अकबर का यह पहला वैवाहिक सम्बन्ध था। अकबर ने राजा भारमल के दत्तक पुत्र **भगवानदास** एवं पौत्र **मानसिंह** को राजकीय सेवा में लेकर उच्च पदों पर नियुक्त किया, जिन्होंने आजीवन अकबर के प्रति अपनी स्वामिभक्ति बनाए रखी। इसके बाद एक-एक करके राजस्थान के बहुत-सारे राजाओं ने अकबर के साथ संधि करके उसकी अधीनता स्वीकार कर ली और उसके साथ विवाह-सम्बन्ध स्थापित किए।

राजस्थान में अपनी नीति के कार्यान्वयन में अकबर को कुछ राजपूत राज्यों के साथ संघर्ष भी करना पड़ा क्योंकि कुछ ने सैनिक कार्यवाही के बाद ही अकबर की अधीनता को स्वीकार किया। 1562 में मेरटा या मेड़ता का पतन हुआ और 1568 ई० में रणथम्भौर का। मारवाड़, बीकानेर और जैसलमेर ने 1570 ई० में बिना किसी प्रतिरोध के ही अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। अकबर ने इन युद्ध करने वाले राजाओं को भी उदारतापूर्वक क्षमा कर दिया और वही सम्मान प्रदान किया, जो बिना युद्ध किए अधीनता स्वीकार कर लेने वाले राजाओं को दिया था। उसने इन राजपूतों को न तो सामाजिक-राजनीतिक दृष्टि से हीन समझा और न ही इनकी धार्मिक स्वतन्त्रता पर कोई प्रतिबन्ध लगाया। केवल राजपूताना का एक ही राज्य ऐसा था जिसे अकबर की अधीनता स्वीकार कर लेना अपमानजनक लगा। वह था

Scanned with CamScanner

'मेवाड़' जो मुगलों के विरुद्ध सतत संघर्षशील रहा। पहले तो मेवाड़ के **राणा उदयसिंह** और उसके बाद उसके पराक्रमी पुत्र **राणा प्रताप** ने अकबर से सतत संघर्ष किया।

अकबर की राजपूत नीति के परिणाम—अकबर की राजपूत नीति के परिणाम उसके अपने लिए तथा मुगल साम्राज्य दोनों के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, लाभदायक एवं दूरगामी सिद्ध हुए। **पहली बात** तो यह कि पिछली कई शताब्दियों से तुर्क-अफगान-मुगल शासकों का जो राजपूत राजाओ से संघर्ष होता चला आ रहा था, वह न केवल समाप्त हो गया, वरन् जो समय एवं धन इनको दबाने में लगाना पड़ता था वह अब राज्य के विकास तथा अन्य रचनात्मक कार्यों में लगाया जा सकता था। **दूसरी बात** यह है कि इन राजपूतों ने, विशेषकर अकबर के समय में, देश की राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रगति में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। **तीसरी बात** यह है कि अकबर की उदारता के कारण इन राजपूतों को इस बात को स्वीकार कर लेने में आसानी हो गई कि भारत से उनकी सत्ता वास्तव में समाप्त हो गई है। इसीलिए उन्होंने बार-बार सत्ता वापस लेने के प्रयत्नों को छोड़कर राज्य के प्रति विरोध की नीति के स्थान पर सहयोग की नीति अपनाना प्रारम्भ किया।

निष्कर्ष—अकबर की राजपूत नीति के कारण मुगल साम्राज्य को सुरक्षा एवं स्थायित्व प्राप्त हुआ तथा अकबर का राज्य सही अर्थों में **राष्ट्रीय राज्य** कहलाने का अधिकारी बन सका।

प्रश्न 3—अकबर की धार्मिक नीति का वर्णन कीजिए।

Describe the Religious policy of Akbar.

अथवा **उन कारणों का उल्लेख कीजिए, जिनसे अकबर ने हिन्दुओं के प्रति सम्मान की नीति का निर्माण किया।**

Bring out clearly the factors which shaped Akbar's attitude towards the Hindus.

उत्तर—

अकबर की धार्मिक नीति
(Religious Policy of Akbar)

भारत का मध्यकाल मुस्लिम संस्कृति का युग था। इस युग में मुस्लिम शासकों ने हिन्दुओं पर अत्याचार करना अपना परम धार्मिक और राजनीतिक उद्देश्य समझ लिया था, जिसके कारण उन्हें कभी भी हिन्दुओं का सहयोग प्राप्त न हो सका। किन्तु अकबर में उदारता, सहिष्णुता आदि के गुण थे, जिनके कारण वह भली प्रकार समझता था कि हिन्दुओं और अफगानों को अपना विरोधी बनाकर भारत में शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना नहीं की जा सकती थी। साथ ही उसकी धार्मिक सहिष्णुता की नीति में उसकी कूटनीतिपूर्ण बुद्धि भी कार्य कर रही थी और उस समय मुगल साम्राज्य की दृढ़ता के लिए सभी जातियों का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक हो गया था।

अकबर की धार्मिक नीति के कारण—यद्यपि अकबर एक कट्टर मुसलमान था, किन्तु निम्नलिखित कुछ कारण ऐसे थे, जिससे उसके चरित्र में निष्पक्षता, उदारता तथा सहिष्णुता आदि गुणों का समावेश हो गया था—

(1) हिन्दुओं के साथ सम्बन्ध—अकबर यह भली प्रकार समझता था कि हिन्दुस्तान वास्तव में हिन्दुओं का घर है। उसका यह भी विश्वास था कि मध्यकालीन शासकों की असफलता का मुख्य कारण यह था कि वे हिन्दुओं से घृणा करते थे, जिसके कारण उन्हें हिन्दुओं का सहयोग प्राप्त न हो सका। अकबर ने हिन्दुओं की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए, विशेषकर राजपूतों के साथ मधुर सम्बन्धों को स्थापित किया। उसने आमेर के कछवाहा राजा

Scanned with CamScanner

भारमल अथवा **बिहारीमल** की पुत्री के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया। बिहारीमल के पुत्र **भगवानदास** तथा पौत्र **मानसिंह** को उच्च पदों पर नियुक्त किया। कालान्तर में अकबर ने जोधपुर, जैसलमेर आदि के राजपूत राजवंशों में भी वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। इन सम्बन्धों का परिणाम यह हुआ कि उसे हिन्दुओं का सहयोग एवं सहानुभूति प्राप्त हुई।

(2) शिक्षकों एवं संरक्षकों का प्रभाव—अकबर का शिक्षक **अब्दुल लतीफ** अत्यन्त उदार एवं सहिष्णु था। वह अपने धार्मिक विश्वासों में इतना उदार था कि शिया लोग उसे सुन्नी और सुन्नी प्रभाव-क्षेत्र के लोग उसे शिया समझते थे। उसने ही अकबर को **सुलह-कुल** (सबके साथ शान्ति) की नीति का पाठ पढ़ाया। अकबर का संरक्षक **बैरम खाँ** शिया सम्प्रदाय का अनुयायी था। उसमें सुन्नियों जैसी धार्मिक कट्टरता नहीं थी। वह दूसरे धर्मों का भी आदर करता था। अत: शिक्षक एवं संरक्षक दोनों के ही उदार और धर्मसहिष्णु विचारों का प्रभाव अकबर पर पड़ा।

(3) इस्लाम धर्म के विद्वानों के आपसी संघर्ष—अकबर धार्मिक गोष्ठियाँ आयोजित किया करता था, किन्तु इन गोष्ठियों में इस्लाम धर्म के विद्वानों के मध्य हुए पारस्परिक मतभेदपूर्ण वार्तालापों से उसे अत्यन्त दु:ख होता था, क्योंकि वे पारस्परिक मतभेदों के कारण आपस में गाली-गलौच भी कर लेते थे। ऐसी स्थिति में धर्म की मूल भावनाएँ समाप्त हो जाती थीं। **बदायूँनी** ने लिखा है, **''एक रात उलेमाओं की गर्दनों की नसें आवेश में तन गईं और भयंकर कोलाहल मचने लगा। शहंशाह उनके इस व्यवहार से बहुत क्रोधित हुआ।''** इन सब बातों ने अकबर के मन में तथा धार्मिक विचारों में अत्यधिक परिवर्तन किया।

(4) धर्मवेत्ताओं का प्रभाव—यद्यपि अकबर अशिक्षित था, किन्तु वह प्रत्येक धार्मिक सिद्धान्त की सत्यता तक पहुँचने का प्रयत्न किया करता था। सभी धर्मों से सम्बन्ध बनाए रखने एवं उनके मूल सिद्धान्तों के विषय में जानने को वह सदैव इच्छुक रहता था, जिसके कारण अकबर की धार्मिक विचारधाराओं में परिवर्तन हुआ। हिन्दू धर्म के प्रभाव के कारण वह पुनर्जन्म के सिद्धान्तों में श्रद्धा रखने लगा, जैन धर्म के प्रभाव के कारण उसने अपने बहुत-से पक्षियों एवं कैदियों को स्वतन्त्र कर दिया तथा मांस-भक्षण काफी कम कर दिया।

(5) अन्य धर्म एवं सम्प्रदायों के विद्वानों का प्रभाव—ज्ञानवर्द्धन करने के उद्देश्य से विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के विद्वानों से अकबर का सम्पर्क बढ़ा। सूफी मत के विद्वानों का उस पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उस काल में सूफी मत के अनुसार सहिष्णुता, ईश्वर-भक्ति एवं चरित्र की शुद्धता पर जोर दिया जाता था और आडम्बरों एवं पाखण्डों का खण्डन किया जाता था। अत: अकबर ने इन नियमों का अनुसरण किया। अकबर पर **शेख मुबारक** एवं उसके पुत्र **अबुल फजल** के विचारों का अच्छा प्रभाव था।

(6) पूर्वजों का प्रभाव—अकबर तैमूर के वंश से सम्बन्धित था। तैमूर वंश ने धर्म के नाम पर कभी भी अत्याचार नहीं किए थे। इसके साथ-साथ उसके माता-पिता भी उदार प्रकृति के थे। अकबर पर अपनी उदार माता हमीदा बानू बेगम के चरित्र का अनुकूल प्रभाव पड़ा। यही कारण था कि इन प्रभावों के कारण अकबर के चरित्र में सहिष्णुता की भावना व्याप्त हो गई थी।

अकबर के धार्मिक दृष्टिकोण में परिवर्तन

उपर्युक्त सभी कारणों से अकबर की धार्मिक कट्टरता में उदारता एवं सहिष्णुता का संचार हुआ तथा धार्मिक विचारों में परिवर्तन हुआ। **ईसाई, पारसी, सिख, जैन** आदि धर्मों के विद्वानों के विचारों से अकबर पूर्ण रूप से प्रभावित हुआ। यहाँ से अकबर के धार्मिक विश्वासों के विकास का द्वितीय युग प्रारम्भ होता है। इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर, अकबर ने 1575 ई०

Scanned with CamScanner

में फतेहपुर सीकरी में एक **इबादतखाने** का निर्माण कराया, जिसमें वह धार्मिक सम्मेलनों का आयोजन किया करता था। किन्तु कुछ समय उपरान्त यह इबादतखाना शिया एवं सुन्नी विद्वानों के संघर्ष का एक अड्डा बन गया। इबादतखाने में एकत्र धर्माचार्यों के सम्मुख अकबर ने अपने महान, निष्पक्ष, उदार विचारों को प्रकट करते हुए कहा था—"हे विद्वानो! मेरा एकमात्र उद्देश्य सत्य को जानना है और यथार्थ धर्म के सिद्धान्तों की खोज करना तथा उनका प्रचार करना है और इन सिद्धान्तों द्वारा इनके अलौकिक स्रोत तक पहुँचना है। इसलिए ध्यान रखो कि तुम अपने मानवीय स्वभाव के कारण कहीं पथभ्रष्ट होकर सत्य को छुपा न लो और परमेश्वर के आदर्शों के विरुद्ध कुछ न कहो। यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हें भगवान के सामने अपनी अपवित्रता का जवाब देना होगा और उसका फल भुगतना होगा।" अत: विद्वानों की इस धर्मान्धता के कारण उसने इस्लाम धर्म में सुधार करने का दृढ़ संकल्प किया तथा धार्मिक वाद-विवादों का आयोजन करना शुरू कर दिया।

अकबर के विभिन्न धार्मिक समन्वय के कार्यक्रमों का यह परिणाम हुआ कि अब सुन्नी मुसलमान दो भागों में विभाजित हो गए तथा एक-दूसरे को नीचा दिखाने की सोचने लगे। अत: अकबर के मन में यह धारणा बन गई कि केवल इस्लाम धर्म से उसे शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। अत: उसने इबादतखाने के दरवाजे विभिन्न एवं अन्य धर्मावलम्बियों के लिए भी खोल दिए और वह ईसाई, जैन, पारसी आदि धर्मों के आचार्यों को वाद-विवादों में भाग लेने का अवसर देने लगा। 22 जून, 1579 ई० को फतेहपुर सीकरी की प्रमुख वेदी पर चढ़कर उसने कवि **फैजी** द्वारा रचित अपने नाम का खुतबा पढ़ा और **'अल्लाह-हो-अकबर'** नामक शब्द का प्रयोग किया। वास्तव में इस शब्द का अर्थ है कि **"खुदा ही सबसे बड़ा है।"** किन्तु उसके विरोधियों ने इसका अर्थ लगाया कि **"अकबर ही अल्लाह है।"**

सितम्बर, 1579 ई० में **शेख मुबारक** ने **'मजहर'** (प्रपत्र) पेश किया, जिसके द्वारा देश में इस्लाम सम्बन्धी विचारों में अकबर को पंच-फैसले (Arbitration) का अधिकार प्रदान किया गया। आधुनिक इतिहासकारों ने इसे एक **'अचूक आज्ञापत्र'** (Infallibility Decree) कहकर इसकी आलोचना की है, जो सर्वथा अनुचित है।

अकबर के धार्मिक विचारों के विकास की परिणति हमें दीन-ए-इलाही में दिखाई पड़ती है, जो उसके द्वारा 1582 ई० में चलाया गया एक नया पंथ अथवा सम्प्रदाय था।

निष्कर्ष—अकबर की हिन्दुओं के प्रति उदार नीति की सभी विद्वानों द्वारा मुक्त कंठ से प्रशंसा की जाती है। परन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि वह राजनीतिक स्वार्थों के कारण भी हिन्दुओं को प्रशासन में साथ लेने के लिए बाध्य हुआ था जैसा कि **के० गोयल** ने लिखा है—"वास्तव में अकबर एक मुसलमान ही था, उसने किसी भी मुसलमान शहजादी का विवाह हिन्दू राजा के साथ नहीं किया।" परन्तु फिर भी अकबर को महान मानना चाहिए क्योंकि वह स्वयं होली, दीवाली, बसन्त आदि जैसे महत्त्वपूर्ण हिन्दू त्योहारों में भाग लिया करता था।

प्रश्न 4—"अकबर का हृदय किसी भी सिद्धान्त से प्रभावित नहीं हुआ और वह उसी प्रकार मर गया, जिस प्रकार वह बहुत वर्षों तक उस व्यक्ति की भाँति जीवित रहा, जिसके धर्म का कोई भी व्यक्ति नाम नहीं रख सकता।" क्या यह कथन सत्य है?

"Akbar's heart was never touched by any doctrine and he died as he had lived for many years a man whose religion nobody could name." Is this a correct estimate?

Scanned with CamScanner

अथवा "दीन-ए-इलाही उस युग का बच्चा था, उसका संस्थापक नव-जागृति तथा धार्मिक सुधार युग का पुत्र था।" इस कथन की पुष्टि कीजिए तथा पूर्ण रूप से विवेचना कीजिए।

"Din-e-Ilahi was the child of the age. Its founder was the son of the Renaissance and the Reformation." Explain and discuss fully.

अथवा अकबर के दीन-ए-इलाही के विषय में आप क्या जानते हैं? क्या वह उसकी मूर्खता का द्योतक था?

What do you know about Akbar's Din-e-Ilahi? Was it a monument of Akbar's folly?

अथवा दीन-ए-इलाही पर एक आलोचनात्मक लेख लिखिए।

Write a critical article on Din-e-Ilahi.

उत्तर—

दीन-ए-इलाही और उसके सिद्धान्त
(Din-e-Ilahi and its Principles)

अकबर द्वारा 'दीन-ए-इलाही' धर्म प्रचलित करने का मुख्य उद्देश्य एक राष्ट्रीय धर्म की स्थापना करना था, जो हिन्दू व मुसलमानों दोनों को ही मान्य हो। इस धर्म में देवी-देवताओं तथा पैगम्बर आदि का कोई स्थान नहीं था।

दीन-ए-इलाही के सिद्धान्त—दीन-ए-इलाही धर्म के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित थे—

(1) इस धर्म के मानने वाले अनुयायियों के लिए मांस-भक्षण का निषेध था तथा उन्हें सबके हितों के लिए प्रयास करना पड़ता था।

(2) इस धर्म के अनुयायी ईश्वर के एकात्मक स्वरूप में विश्वास करते थे तथा अकबर को उसका पैगम्बर समझते थे।

(3) इस धर्म के अनुयायियों के लिए अकबर को साष्टांग प्रणाम करना आवश्यक था।

(4) इस धर्म के अनुयायियों के लिए यह आवश्यक था कि वे अपने जीवन में ही अपना मृत-भोज अवश्य दे दें।

(5) इस धर्म के प्रत्येक अनुयायी को अपनी वर्षगाँठ पर भोज देना अनिवार्य था।

(6) इस धर्म को मानने वाले **सूर्य** एवं **अग्नि** की उपासना करते थे।

(7) इस धर्म के अनुयायी जब परस्पर मिलते थे तो एक **'अल्लाह-हो-अकबर'** कहता था, तो दूसरा **'जल्ले-जलाल-हू'** कहता था।

(8) इस मत के समर्थकों के लिए निम्न कोटि का कार्य करने वाले व्यक्तियों के साथ भोजन करना वर्जित था।

(9) प्रत्येक रविवार को इस धर्म के नवीन सदस्यों को धर्म में प्रविष्ट होने के लिए दीक्षित किया जाता था तथा अकबर स्वयं इस दिन धर्म की दीक्षा दिया करता था।

(10) इस धर्म के उपासकों के लिए अपनी धन, सम्पत्ति आदि का भी दान करना आवश्यक था जो सम्पूर्ण धन-सम्पत्ति का सम्राट को दान कर देते थे, वे बहुत ही उच्च कोटि के धर्म उपासक माने जाते थे।

Scanned with CamScanner

(11) दीन-ए-इलाही स्वीकार करने वाले व्यक्तियों से बादशाह की सेवा के लिए धन-सम्पदा, मान-सम्मान, जीवन और धर्म का बलिदान कर देने की आशा की जाती थी। दीन-ए-इलाही के सदस्यों की भक्ति के ये चार पद थे।

दीन-ए-इलाही के सम्बन्ध में अकबर द्वारा प्रदत्त नए कानून

अकबर इस धर्म के विषय में इतना उत्तेजित हो गया था कि उसने अपने को पैगम्बर घोषित कर दिया था। उसने कुछ ऐसे नियमों को भी प्रतिपादित कर दिया था जिसमें इस्लाम का विरोध झलकता था। ये नियम निम्नलिखित थे—

(1) शराब पीना केवल रोगियों के लिए औषधि के रूप में उचित माना गया था।

(2) अकबर ने दरबार में होने वाले उत्सवों को हिन्दू शैली एवं पद्धतियों के आधार पर ही आयोजित करना आरम्भ करवा दिया तथा स्वयं भी हिन्दुओं की तरह दाढ़ी मुँडवाने लगा।

(3) एक पुरुष केवल एक ही स्त्री रख सकता था। स्त्री के बाँझ होने की दशा में ही उसे पुनः विवाह करने की अनुमति दी जा सकती थी।

(4) उस स्त्री के लिए जिसके पति की मृत्यु मिलन से पूर्व ही हो गई हो, सती होना भी अवैध घोषित कर दिया गया था।

(5) सिक्कों पर **इलाही संवत्** लिखा जाना अनिवार्य कर दिया गया था।

(6) जिन हिन्दुओं को दबाव के कारण मुसलमान बनाया गया था, उन्हें अपने पूर्व धर्म में जाने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई थी।

(7) हिन्दू धर्म की भाँति निकट सम्बन्धियों की लड़कियों से विवाह-सम्बन्ध स्थापित करना निषेध कर दिया गया तथा लड़कियों के लिए 14 वर्ष एवं लड़कों के लिए विवाह की आयु 16 वर्ष निश्चित कर दी गई थी।

(8) गो-मांस निषेध कर दिया गया था तथा उसे छूना भी पाप समझा जाने लगा था।

(9) वेश्यालयों के लिए एक अलग स्थान बनाया गया था।

(10) सम्राट के प्रति **सिजदा** उचित ठहराया गया व उसके लिए **'जमींबोस'** शब्द का प्रयोग किया गया था।

दीन-ए-इलाही धर्म की आलोचना
(Criticism of Din-e-Ilahi)

अकबर के दीन-ए-इलाही धर्म के सिद्धान्तों, इसके अस्तित्व आदि को विद्वानों ने शंका की दृष्टि से देखा है तथा उनकी कटु आलोचना की है। इन विरोधियों में तत्कालीन इतिहासकार **बदायूँनी** का नाम उल्लेखनीय है। वह दीन-ए-इलाही धर्म की आलोचना करते हुए कहता है—"अकबर ने स्पष्ट रूप से जिनों, देवदूतों तथा अदृश्य जगत के अन्य जीवों के अस्तित्व को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उसने इस्लाम के साक्षियों के उत्तरोत्तर साक्ष्य का खण्डन किया और कुरान की सत्यता को केवल वहीं तक सही माना, जहाँ तक कि उसका मनुष्य की बुद्धि से मेल खाता था।"

कुछ विद्वानों ने अकबर को इस्लाम धर्म का शत्रु मानते हुए कहा है—"मनुष्य के बाहरी विश्वासों का तथा इस्लाम के केवल अक्षरों का हार्दिक श्रद्धा के बिना कोई महत्त्व नहीं है। धर्म के शब्दों का जप करना, खतना करवाना, अथवा राजशक्ति के भय से जमीन पर सिजदा करना आदि का ईश्वर की दृष्टि से कोई भी महत्त्व नहीं है।"

Scanned with CamScanner